स्वदेशी चिकित्सा

बीमारियों को ठीक करने के आयुर्वेदिक नुस्खे

महान आयुर्वेद विशेषज्ञ :
श्री वागभट्ट द्वारा रचित अष्टांगहृदयम् पर आधारित

भाग - 2

संकलन एवं संपादन
राजीव दीक्षित
पुर्नलेखन : प्रदीप दीक्षित

भाई राजीव दीक्षित - पुस्तक संग्रह ⑤

राजीव भाई के व्याख्यानों पर आधारित साहित्य

शीर्षक		मूल्य
1.	स्वदेशी चिकित्सा, भाग - 1	रू. - 50/-
2.	स्वदेशी चिकित्सा, भाग - 2	रू. - 50/-
3.	स्वदेशी चिकित्सा, भाग - 3	रू. - 50/-
4.	बहुराष्ट्रीय कंपनियों द्वारा भारत की लूट	रू. - 50 /-
5.	सरकारों ने दिया है देश को लूटने का लाइसेंस	रू. - 50/-
6.	बहुराष्ट्रीय कंपनियों का असली चेहरा	रू. - 50/-
7.	मांसाहार से हानियां	रू. - 60/-
8.	WTO : भारत को गुलाम बनाने का संविधान	रू. - 50/-
9.	गाय और पंचगव्य द्वारा घरेलू इलाज	रू. - 50/-
10.	गाय और स्वदेशी कृषि	रू. - 50/-

स्वदेशी चिकित्सा किताबों का सेट में इनके आलावा 3 अन्य किताबें भी हैं।

शीघ्र प्रकाशित

11.	स्वदेशी भारत को पुनः सोने की चिड़िया बनाने का मंत्र	रू. - 50/-
12.	भारत की पुनर्योजना : स्वदेशी के आधार पर	रू. - 50/-
13.	भारत स्वाभिमान शंखनाद पर आधारित 10 किताबों का सेट	रू. - 50/-
14.	स्वदेशी भारत की रूपरेखा	रू. - 50/-
15.	भारत और पश्चिमी सभ्यता का अन्तर	रू. - 50/-
16.	स्वदेशी चिकित्सा, भाग - 4	रू. - 50/-

राजीव भाई द्वारा दिये गये व्याखान (*MP3*)

हमारा संकल्प:

5 करोड़ घरों में राजीव भाई की आवाज पहुँचाना–साथी हाथ बढ़ाना

स्वदेशी चिकित्सा

(महान आयुर्वेद विशेषज्ञ : श्री वागभट्ट द्वारा रचित अष्टांगहृदयम् पर आधारित)

भाग–2

संकलन एवं संपादन

राजीव दीक्षित

स्वदेशी प्रकाशन,
सेवाग्राम, वर्धा

स्वदेशी चिकित्सा

लेखक : राजीव दीक्षित

प्रकाशक : स्वदेशी प्रकाशन

सर्वाधिकार प्रकाशक के पास सुरक्षित

प्रथम संस्करण : 2012 (3000 प्रतियाँ)

राजीव दिक्षीत मेमोरीयल स्वदेशी उत्थान संस्था,
सेवाग्राम, वर्धा के लिए प्रकाशित

राजीव दिक्षीत मेमोरीयल स्वदेशी उत्थान संस्था,
सेवाग्राम रोड, हुत्तामा स्मारक के पास
सेवाग्राम, वर्धा – 442 102
फोन न.– 07152-284014
मोबाईल : 9822520113, 9422140731

प्रयोग भूमी – स्वदेशी ग्राम,
सेवाग्राम पवनार रोड, ग्राम – वरूड
पो. सेवाग्राम, वर्धा – 442102

सहयोग राशि : 50 रुपये

विषय सूची

प्रस्तावना	**4**
प्रथम अध्याय – ज्वर चिकित्सा	**5–39**
द्वितीय अध्याय – रक्तपित्त चिकित्सा	**40–47**
तृतीय अध्याय – कास (खाँसी) चिकित्सा	**48–75**
चुर्तथ अध्याय – भवास (दमा, अस्थमा) चिकित्सा	**76–85**
पंचम अध्याय – राजयक्ष्मा(टी. बी. या तपैदिक) चिकित्सा	**86--96**
शष्ठम् अध्याय – ह्रदय रोग और तृष्णा रोग	**97–109**
सप्तम् अध्याय– मद्यपान से होने वाले रोगों की चिकित्सा	**110–120**

प्रस्तावना

भारत में जिस शास्त्र की मदद से निरोगी होकर जीवन व्यतीत करने का ज्ञान मिलता है उसे आयुर्वेद कहते है। आयुर्वेद में निरोगी होकर जीवन व्यतीत करना ही धर्म माना गया है। रोगी होकर लम्बी आयु को प्राप्त करना या निरोगी होकर कम आयु को प्राप्त करना दोनों ही आयुर्वेद में मान्य नहीं है। इसलिये जो भी नागरिक अपने जीवन को निरोगी रखकर लम्बी आयु चाहते हैं, उन सभी को आयुर्वेद के ज्ञान को अपने जीवन में धारण करना चाहिए। निरोगी जीवन के बिना किसी को भी धन की प्राप्ति, सुख की प्राप्ति, धर्म की प्रप्ति नहीं हो सकती है। रोगी व्यक्ति किसी भी तरह का सुख प्राप्त नहीं कर सकता है। रोगी व्यक्ति कोई भी कार्य करके ठीक से धन भी नहीं कमा सकता है। हमारा स्वस्थ शरीर ही सभी तरह के ज्ञान को प्राप्त कर सकता है। शरीर के नष्ट हो जाने पर संसार की सभी वस्तुयें बेकार हैं। यदि स्वस्थ शरीर है तो सभी प्रकार के सुखों का आनन्द लिया जा सकता है। दुनिया में आयुर्वेद ही एक मात्र शास्त्र या चिकित्सा पद्धति है जो मनुष्य को निरोगी जीवन देने की गारंटी देता है। बाकी अन्य सभी चिकित्सा पद्धतियों में "पहले बीमार बनें फिर आपका इलाज किया जायेगा", लेकिन गारंटी कुछ भी नहीं है। आयुर्वेद एक शाश्वत एवं सातत्य वाला शास्त्र है। इसकी उत्पत्ति सृष्टि के रचियता श्री ब्रह्मभाजी के द्वारा हुई ऐसा कहा जाता है। ब्रह्मभाजी ने आयुर्वेद का ज्ञान दक्ष प्रजापति को दिया। श्री दक्ष प्रजापति ने यह ज्ञान अश्विनी कुमारों को दिया। उसके बाद यह ज्ञान देवताओं के राजा इन्द्र के पास पहुँचा। देवराजा इन्द्र ने इस ज्ञान को ऋषियों–मुनियों जैसे आत्रेय, पुतर्वसु आदि को दिया। उसके बाद यह ज्ञान पृथ्वी पर फैलता चला गया। इस ज्ञान को पृथ्वी पर फैलाने वाले अनेक महान ऋषि एवं वैद्य हुये हैं। जो समय–समय पर आते रहे और लोगों को यह ज्ञान देते रहे हैं। जैसे चरक ऋषि, सुश्रुत, आत्रेय ऋषि, पुनर्वसु ऋषि, काश्यप ऋषि आदि–आदि। इसी श्रृंखला में एक महान ऋषि हुये वाग्भट्ट ऋषि जिन्होंने आयुर्वेद के ज्ञान को लोगों तक पहुँचाने के लिये एक शास्त्र की रचना की, जिसका नाम "अष्टांग हृदयम्"।

इस अष्टांग हृदयम् शास्त्र में लगभग 7000 श्लोक दिये गये है। ये श्लोक मनुष्य जीवन को पूरी तरह निरोगी बनाने के लिये हैं। प्रस्तुत पुस्तक में कुछ श्लोक, हिन्दी अनुवाद के साथ दिये जा रहे हैं। इन श्लोकों का सामान्य जीवन में अधिक से अधिक उपयोग हो सके इसके लिये विश्लेषण भी सरल भाषा में देने की कोशिश की गयी है।

प्रथम अध्याय

अथाऽतोज्वरचिकित्सितं व्याख्यास्यामः।
इति ह समाहुरात्रेयादयो महर्षयः।

अर्थ : निदान स्थान निरूपण के बाद ज्वर चिकित्सा का व्याख्यान करेंगे। ऐसा आत्रेयादि महर्षियों ने कहा था।

ज्वर में लघंन की आवश्यकता.....

आमाशयस्थो हत्वाऽग्निं सामो मार्गान् पिधाय यत्।
विदधाति ज्वरं दोशस्तस्मात्कुर्वीत लघंनम्।।1।।
प्रागूपेषु ज्वरादौ वा बलं यत्नेन पालयन्।
बलाधिष्ठानमारोग्यमारोग्यार्थ क्रियाक्रमः।।2।।
लङ्घनैः क्षपिते दोषे दीप्तेऽग्नौ लाघवे सति।
स्वास्थ्यं क्षुत्तृड् रूचिः पक्तिर्बलमोजश्च जायते।।3।।

अर्थ : आमाशय में स्थित वातादि दोष आमरस के साथ मिल कर तथा रसवाही स्रोतसों के मार्ग को अवरूद्ध कर ज्वर उत्पन्न करते हैं। ज्वर में या ज्वर के पूर्वरूप में प्रयत्न पूर्वक बल की रक्षा करते हुए लघंन करें। क्योंकि बल के अधीन आरोग्य की प्राप्ति होती है और आरोग्य के लिए चिकित्सा क्रम बताया गया है। लघंन के द्वारा दोषों के क्षय होने पर तथा अग्नि के प्रदीप्त होने पर और शरीर में लघुता होने पर आरोग्य, भूख, प्यास, भोजन में रूचि, भोजन का परिपाक, बल तथा ओज की वृद्धि होती है।

विश्लेषण : ज्वर की समाप्ति बताते हुए ज्वर किस प्रकार उत्पन्न होता है इसका निर्देष किया गया है। आम दोष पृथक्–पृथक्या द्वन्द्वज या त्रिदोषज जब आमरस के साथ होकर आमाशय में स्थित होते हैं तब अग्नि की उष्णता को बाहर त्वचा में फैला देते हैं। रसवाही स्रोतसों के बन्द होने से पसीना नहीं निकल पाता। जिसके कारण त्वचा उष्ण हो जाती है। दोष अग्नि के उष्मा को निकाल देते हैं। अतः जाठराग्नि दुर्बल हो जाती है। दोष से आवृत अग्नि दोषों को पचाने में पूर्ण समर्थ नहीं होती है। यदि ऐसी अवस्था में अन्न दिया जाय तो उसका परिपाक समुचित न होकर आम दोष की अधिकता हो जायेगी। जब भोजन नहीं करेंगे तो अग्नि आमदोष को धीरे–धीरे पकाने

लगेगी। इससे दोषों की क्षमता नष्ट हो जायेगी और रसवाही स्रोतसों का मुख खुल जायगा और पसीना निकलने लगेगा जिससे शरीर में हल्कापन, भूख, प्यास, भोजन में रूचि तथा मन में प्रसन्नता होगी। जब दोषों की सामता अधिक होती है तो दोषों का पाचन बहुत विलम्ब से होता है। लघंन यदि अधिक दिनतक किया जाय तो अधिक दुर्बलता हो जाती है। बल के घट जाने से शीघ्र स्वास्थ्य लाभ नहीं होता है। अतः आहार का प्रयोग करना चाहिए जिससे बल कम न हो।।1–3।।

ज्वर में वमन का विधान –

तत्रोत्कृष्टे समुत्क्लिष्टे कफप्राये चले मले।
सहृल्लासप्रसेकाऽन्न–द्वेष–कासविसूचिके।।4।।
सद्योभुक्तस्य सज्जाते ज्वरे सामे विशेषतः।
वमनं वमनार्हस्य शस्तं कुर्यात्तदन्यथा।।5।।
श्वासातिसारसम्मोह–हृद्रोगविषमज्वरान्।

अर्थ : ज्वर में दोष उभरे हुए हों या अधिक उभरे हुए हों, कफ बढ़ा हो, दोष चालायमान हों, हुल्लास (उबकाई), मुख से स्राव, अन्न से द्वेष, कास तथा अतिसार वमन होता हो, भोजन करने के बाद तत्काल ज्वर हुआ हो और विशेष कर साम ज्वर हो तब वमन करने योग्य व्यक्ति को वमन कराना प्रशस्त है। यदि इनसे विपरीत अवस्था हो तो वमन कराने से श्वास, अतिसार, सम्मोह, मूर्च्छा, हृदयरोग तथा विषम ज्वर होता है।।4.5।।

वामक योग–

पिप्लीभिर्युतान् गालान् कलिङ्गैर्मधुकेन वा।।6।।
उष्णाम्भसा समधुना पिबेत्सलवणेन वा।
पटोलनिम्बकर्कोट–वेत्रपत्रोदकेन वा।।7।।
तर्पणेन रसेनेक्षोर्मद्यैः कल्पोदितानि वा।
वमनानि प्रयुञ्जीत बलकालविभागवित्।।8।।

अर्थ : वमन के लिए (1) मदन फल का चूर्ण पीपल के चूर्ण के साथ मिलाकर या (2) मदन फल का चूर्ण इन्द्र जव (कटु इन्द्र जव) के साथ मिलाकर या (3) मुलेठी चूर्ण के साथ मिलाकर मधुके साथ गरम जल से या लवण के साथ गरम जल से पान करे। अथवा (4) पठोल पत्र (5) निम्बपत्र (6) कड़ुआ

खेखसा या (7) बेलपत्र के स्वरस या क्वाथ से मदन फल का चूर्ण पान करें। (8) गन्ने का रस अधिक मात्रा में पीकर (9) कल्प स्थान में बताये हुए वमन कारक औषधि को पीकर बल तथा समय (जाड़ा, बरसात, गरमी) का विचार कर वमन का प्रयोग करें।

विश्लेषण : जाड़ा, बरसात, गर्मी के अनुसार वमन द्रव्यों का विभाग कल्प स्थान में किया गया है। उसे विचार कर रोगी का बल और कोष्ठ की क्रूरता तथा मृदुता तथा मध्यता का विचारकर तीक्ष्ण, मृदु तथा मध्य द्रव्यों का विचार कर प्रयोग करें।।6–8।।

लङ्घन से लाभ...

कृतेऽकृते वा वमने ज्वरी कुर्याद्विशोषणम्।
दोषाणां समुदीर्णानां पाचनाय शमाय च।।9।।

अर्थ : ज्वर पीड़ित व्यक्ति ज्वर में वमन करने पर या न करने पर बढ़े हुए दोषों के पाचन तथा शमन के लिए लघंन करें।।9।।

आमज्वर में लघंन की आवश्यकता तथा अवधि...

आमेन भस्मनेवाग्नौ छन्नेऽन्नं न विपच्यते।
तस्मादादोषपचनाज्ज्वरितानुपवासयेत्।।10।।

अर्थ : राख से ढका हुआ अग्नि जैसे पकाने में असमर्थ होता है उसी प्रकार आमदोष से घिरा हुआ जाठराग्नि अन्न को पचाने में असमर्थ होता है। अतः जब तक आमदोष का पाचन न हो जाय तब तक ज्वर के रोगी को उपवास करायें।

विश्लेषण : जब तक आमदोष का पाचन न हो तब तक उपवास कराने का निर्देष किया गया है। किन्तु आमदोष का पाचन देर से हो तो रोगी का बल घट जायेगा। अतः देर से आमदोष को पचाने में हल्का तथा हितकर भोजन देना चाहिए। ऐसा भी होता है कि आमदोष की प्रबलता से रोगी को खाने की इच्छा या रूचि नहीं होती है। ऐसी अवस्था में उसके मन के अनुकूल आहार देना चाहिए, वह आहार हितकर हो या अहितकर हो। न खाने से शरीर क्षीण हो जायेगा अथवा रोगी की मृत्यु हो जायेगी। क्योंकि पहले कह आये हैं कि बल के अधीन आरोग्य होता है। अतः बल की रक्षा आहार देकर करनी चाहिए।।10।।

ज्वर में उष्ण जल का महत्व.....

तृष्णगल्पाल्पमुष्णाम्बु पिबेद्वातकफज्वरे।
तत्कफं विलयं नीत्वा तृष्णामाशु निवर्तयेत्।।11।।

उदीर्य चाऽग्नि स्रोतांसि मृदूकृत्य विशोधयेत्।
लीनपित्तानिलस्वेदशकृन्मूत्रानुलोमनम्।।12।।
निद्राजाड्यारूचिहरं प्राणानामबलम्बनम्।
विपरीतमत। शीत दोषसङ्घातवर्धनम्।।13।।

अर्थ : वात–कफ ज्वर में प्यास लगने पर थोड़ा–थोड़ा उष्ण जल पिलाना चाहिए। यह उष्ण जल पान कफ को ढीला कर शीघ्र ही प्यास को दूर करता है और अग्नि को तीव्र कर तथा स्रोतेसों को मृदुकर दोषों का संशोधन करता है। इसके अतिरिक्त शरीर में छिपे हुए पित्त, वात, स्वर, मल तथा मूत्र का अनुलोमन करता है। उष्ण जल, निद्रा, शरीर की जड़ता तथा अरूचि को दूर करता है और प्राणों को धारण करता है। इसके विपरीत शीतल जलपान दोषों के समूह को बढ़ाता है।

विश्लेषण : ज्वर की अवस्था में कभी भी शीतल जल का प्रयोग नहीं करना चाहिए। कफ ज्वर में उक्त अष्टमांश, वात ज्वर में चतुर्थांष तथा पित्त ज्वर में अर्द्धांश शेष जल पीने को देना चाहिए। यदि ज्वर की प्रथम अवस्था में केवल उष्ण जल का सेवन किया जाय तो बिना किसी औषधि के ज्वर समाप्त हो जाता है।

उष्ण जल का निषेध....

उष्णमेवङ्गुणत्वेऽपि युज्ज्यान्नैकान्तपित्तले।
उद्रिक्तपित्ते दवथुदाहमोहातिसारिणि।।14।।
विषमद्योत्थिते ग्रीष्मे क्षतक्षीणेऽसृपित्तिनि।

अर्थ : पूर्वोक्त प्रकार से उष्ण जल का उत्तम गुण होने पर भी केवल पित्त के प्रकोप में तथा पित्त की प्रधानता होने पर और अन्तर्दाह, दाह, विष तथा मद्यपान, ग्रीष्म ऋतु, उरक्षत से क्षीण तथा रक्त पित्त में उष्ण जल पान का निषेध है।

विश्लेषण : उष्ण जलपान का रोग विशेष एवं अवस्था विशेष में निषेध किया गया है। इसका तात्पर्य यह है कि गरम रहते हुए जल का पान उपरोक्त अवस्थाओं में नही करना चाहिए। किन्तु उष्ण जल जब शीतल हो जाय तब उसे पान कराने में कोई हानि नहीं है। क्योंकि उष्ण किया हुआ जल शीघ्र पचता है और शीतल जल का परिपाक देर से होता है। शीतल जल पान करने पर छः घण्टे में पचता है और गरम जल शीतल हो तो तीन घण्टे में पचता है। इसके अतिरिक्त गरम किया हुआ गुनगुना जल पीने से डेढ़ घण्टे में परिपक्व होता है।

शडङ्ग पानीय.....

घनचन्दनषुण्ठयम्बुपर्पटोशीरसाधितम्।।15।।
शीतं तेभ्यो हितं तोयं पाचनं तृड्ज्वरापहम्।

अर्थ : नागर मोथा, लालचंदन, सोंठ, सुगन्धवाला पित्त पापड़ा तथा खस इन द्रव्यों के साथ पकाया हुआ जल पीने के लिए ऊपर बताये हुए रोगों में देना हितकर तथा पाचक है और प्यास तथा ज्वर को दूर करने वाला है।

विश्लेषण : इन द्रव्यों के साथ जल पकाने के लिए इन सब द्रव्यों को मिलाकर एक कर्ष (10 ग्रा.) को चौषठ गुना (640 ग्रा.) जल में पकावे। जब 320 ग्राम जल शेष रहे तो छान कर पीने को दें। दिन में पकाये हुए जल को और सूर्यास्त के बाद पकाए हुए जल को रात में पिलाए तथा यदि पेया विलेपी देना हो तो उसी जल से देना चाहिए।

ज्वर में पित्त की प्रधानता–

ऊष्मापित्तादृतेनास्ति ज्वरोनास्त्यूष्मणा विना।।16।।
तस्मात्पित्तविरूद्धानि त्यजेत् पित्ताधिकेऽधिकम्।

अर्थ : पित्त के बिना शरीर में गर्मी नहीं होती है और ज्वर बिना गर्मी के नहीं होता है। अतः सभी प्रकार के ज्वर में पित्त विरोधी वस्तुओं का सेवन नहीं करना चाहिए। यदि ज्वर में पित्त की प्रधानता है तो पित्त विरोधी वस्तुओं का अधिक रूप में सेवन नहीं करना चाहिए।।16।।

ज्वर में वर्जनीय कर्म....

स्नानाभ्यङ्गप्रदेहांश्च परिशेकं च लङ्घनम्।।17।।

अर्थ : ज्वर में स्नान, मालिश, उबटन, परिषेक तथा लघंन का प्रयोग नहीं करना चाहिए।

विश्लेषण : लघंन का तात्पर्य शरीर को लघु बनाने से है। जिन क्रियाओं से शरीर की लघुता होती है वे क्रियाये व्यायाम, मैथुन, पाचन द्रव्य, उपवास, वमन, विरेचन, स्वेदन आदि हैं। उनमें उपवास स्वरूप लघंन ज्वर में करना चाहिए। शेष व्यायाम आदि लघंन क्रिया नहीं करनी चाहिए।।17।।

आम ज्वर में औषध तथा दूध का निषेध—

अजीर्ण इव भूलघ्नं सामे तीव्ररूचि ज्वरे।
न पिबेदौषधं तद्धि भूय एवाममावहेत्।।18।।
आमाभिभूतकोष्ठस्य क्षीरं विषमहेरिव।

अर्थ : जिस प्रकार अजीर्ण जन्य उदर शूल में शूल नाशक औषधि नहीं दी

books.ringaal.com

Visit us for more books